उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल

दिनांकितः 05 अगस्त 2022

समक्ष माननीय न्यायमूर्ति श्री मनोज कुमार तिवारी

ए0 ओ0 संख्या 82 सन् 2021

मध्य

राजा भट्ट और अन्य..... .....अपीलकर्ता

(श्री पीयूष गर्ग, अधिवक्ता)

बनाम

श्रीमती शीला देवी अन्य..... .....उत्तरदाता

(श्री आदित्य सिंह, अधिवक्ता उत्तरदाता नं0–03)

निर्णय

पक्षकारों के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. यह अपील, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43 नियम 1 (सी) के अंतर्गत, प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, ऋषिकेश देहरादून द्वारा प्रकीर्ण वाद संख्या 13 सन् 2019 में दिनांक 10.01.2020 को पारित आदेश के विरूद्ध है। कथित आदेश से, अपीलार्थियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 नियम 9 के अंतर्गत उनके द्वारा प्रस्तुत विलम्ब माफी आवेदन प्रार्थना पत्र को खारिज कर दिया गया अतः अपीलकर्ताओं द्वारा दायर पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र भी खारिज कर दिया गया।

3. आक्षेपित आदेश के अवलोकन से विदित होता है कि अपीलार्थियों द्वारा दायर विलंब माफी आवेदन मात्र इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि अपीलार्थियों के अधिवक्ता दिनांक 03.01.2019 को न्यायालय के समक्ष उपस्थित थे, जब अगली तिथि 08.01.2019 तय की गई थी, इसलिए, अपीलार्थियों द्वारा उठाया गया तर्क कि गलती के कारण अगली तिथि 08.02.2019 नोट की गई थी, विश्वसनीय नहीं है।

4. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि 08.01. 2019 को अपीलार्थियों की गैर–हाजिरी एक सद्भावी गलती के कारण थी, क्योंकि वाद में निर्धारित अगली तिथि 08.02.2019 के रूप में नोट की गई थी जबकि, वास्तव में दिनांक 08.01.2019 निर्धारित की गई थी, और इस गलती के कारण, वे निर्धारित तिथि पर विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हो सके। आगे यह भी तर्क प्रस्तुत किया जब अपीलार्थियों को वाद के खारिज होने के बारे में पता चला। तो उनके द्वारा तुरंत विलम्ब माफी आवेदन के साथ पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र तुरंत दायर किया गया था इसके अग्रेतर यह तर्क प्रस्तुत किया कि अपीलार्थियों ने दिनांक 15. 03.2019 को खारिजा के बारे में जानकारी प्राप्त की और विलंबमाफी आवेदन पत्र के साथ दिनांक 08.04.2019 को पुर्नस्थापना प्रार्थना पत्र दायर किया गया। अग्रेत्तर यह तर्क प्रस्तुत किया कि अपीलार्थियों ने वर्ष 2012 में विनिर्दिष्ट अनुपालन के अनुतोष

की मांग करते हुए प्रश्नगत वाद दायर किया था, क्योंकि अपीलार्थियों का मूल्यवान समपत्ति अधिकार वाद में शामिल है, इसलिए, निर्धारित तिथि पर उनकी गैर मौजूदगी को जानबूझकर होना नहीं कहा जा सकता है।

5. इसके विपरीत, श्री आदित्य सिंह, प्रत्यर्थी–प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन करते हुए तर्क प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ताओं को निर्धारित तिथि की जानकारी थी, क्योंकि उनके अधिवक्ता 03.01.2019 को उपस्थित थे, इस प्रकार विचारण न्यायालय के समक्ष उनकी अनुपस्थिति जानबूझकर थी।

6. विलंब माफी आवेदन में, अपीलार्थियों द्वारा लिया गया आधार यह है कि उन्हें मात्र 15.03.2019 को वाद के खारिज होने के बारे में पता चला और उन्हें 05.04.2019 को खारिजा आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त हुई। इसके बाद 08.04.2019 को आदेश 9 नियम 9 सीपीसी के अंतर्गत पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र दायर किया गया, इस प्रकार, यदि खारिजा के आदेश की जानकारी की तिथि से देखा जायेगा तो कोई विलम्ब नहीं हुआ।

7. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि यदि परिसीमा की गणना वाद के खारिज होने की तिथि से की जाती है, फिर भी, आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में बिताए गए समय को समायोजित करने के पश्चात मात्र 39 दिनों का विलंब हुआ। उन्होंने तर्क दिया कि विचारण न्यायालय द्वारा, विलम्ब माफी आवेदन के गुण–दोषों तक खुद को सीमित रखने के बजाय, बाहरी तथ्य अर्थात् दिनांक 08.01.2019 को गैर–हाजिर होने के कारण पर विचार किया। इस प्रकार, उनके अनुसार, अपीलार्थियों ने विलम्ब को माफ करने के लिये पर्याप्त कारण दिखाया और विद्वान विचारण न्यायालय का विलम्ब माफी आवेदन को खारिज करना न्यायोचित नहीं था, जिसके परिणामस्वरूप न्याय की हानि हुई।

8. विद्वान विचारण न्यायालय ने विलंब माफी आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि पिछली तिथि यानी दिनांक 03.01.2019 को, अपीलकर्ताओं की ओर से पेश अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत एक आवेदन पत्र पर मामला स्थगित कर दिया गया था, इसलिए, विलंब माफी आवेदन में लिये गये आधार, की अगली तिथि, अर्थात 08.01.2019 नियत होने के बारे में जानकारी की कमी होने के बारे में, विश्वास नहीं किया जा सकता।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि उनके मुवक्किलों द्वारा लिया गया आधार यह था कि उनके अधिवक्ता ने, सद्भावी गलती के कारण, अगली तिथि के रूप में 08.02.2019 को नोट किया, जिसके कारण वे 08.01.2019 को विचारण न्यायालय के समक्ष के समक्ष पेश नहीं हुए।

10. अधिवक्ता द्वारा सद्भावी गलती विलम्ब की माफी के लिये एक वैध आधार हो सकता है, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पंजाबी विश्वविद्यालय और अन्य

बनाम आचार्य स्वामी गणेश और अन्य (1973) 3 एससीसी 800 में अवधारित किया गया है। इंडियन ऑयल कारपोरेशन लि. बनाम सुब्रत बोराह चौलेक, (2010) 14 एस. सी. सी. 419 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने दोहराया कि विलम्ब की माफी के लिये पर्याप्त कारण पर विचार करते हुए, न्यायालय आमतौर पर उदार दृष्टिकोण का पालन करते हैं विशेष रूप से जब पक्षकार पर कोई लापरवाही, निष्क्रियता या दुर्भावना का आरोप नहीं लगाया जा सकता।

11. इसी प्रकार एन. बालाकृष्णनन् बनाम एम0 कृष्णमूर्ति (1998) 7 एस0सी0सी0 123 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस मुद्दे पर विधि का सारांश इस प्रकार दियाः—

> 12 न्यायालय जानता है कि विलम्ब को माफ करने से इनकार का परिणाम यह होगा कि कोई वादी अपना मामला पेश करने से वंचित हो जाएगा। ऐसी कोई धारणा नहीं है कि न्यायालय तक पहुंचने में विलम्ब हमेशा जानबूझकर की जाती है। इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 में शब्द ''पर्याप्त हेतुक'' का उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिससे कि सारवान न्याय को आगे बढ़ाया जा सके। शकुंतला जैन बनाम कुंतल कुमारी एवं पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा नगरपालिका।
>
> 13 यह याद रखा जाना चाहिये कि विलम्ब के प्रत्येक मामले में संबंधित वादी की ओर से कुछ चूक हो सकती है। केवल इतना ही, उसके अनुरोध को ठुकराने और उसके विरूद्ध दरवाजे बंद करने के लिये पर्याप्त नहीं है। यदि स्पष्टीकरण दुर्भावनापूर्ण नहीं है या इसे विलम्बकारी रणनीति के भाग के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो न्यायालय को वादी के प्रति परम विचार करना चाहिये। लेकिन जब यह सोचने के लिये उचित आधार हैं कि विलम्ब जानबूझकर समय हासिल करने के लिये पार्टी द्वारा की गई थी, तो अदालत को स्पष्टीकरण की स्वीकृति के विरूद्ध जाना चाहिए। विलम्ब को माफ करते हुए, न्यायालय को विरोधी पक्ष को पूरी तरह से नहीं भूलना चाहिए। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वह हारने वाला है और उसने मुकदमेबाजी का काफी बड़ा खर्च भी उठाया होगा। यह एक संतोषजनक दिशानिर्देश होगा कि जब अदालतें आवेदक की ओर से हुई असावधानी के कारण विलम्ब को माफ करती है तो अदालत विरोधी पक्ष को उसके नुकसान की भरपाई करेगी।

12. इस प्रकार, यह सुस्थापित है कि विलम्ब माफी आवेदन पत्र पर विचार करते समय, उदार और न्याय उन्मुख दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिये, विशेष रूप से, जब कोई लापरवाही या निष्क्रियता या ईमानदारी की कमी के लिये चूक करने वाले पार्टी जिम्मेदार नहीं है।

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने शेषनाथ सिंह बनाम बैद्यबाटी श्योराफुली सहकारी बैंक लिमिटेड (2021)7 एससीसी 313 के मामले में निम्नलिखित शब्दों में कानूनी स्थिति को संक्षेप में प्रस्तुत किया हैः—

> 59. आवेदन या अपील फाइल करने में विलम्ब की क्षमा के लिये पर्याप्त हेतुक का अस्तित्व पूर्ववर्ती शर्त है। विलम्ब के लिये दिया गया स्पष्टीकरण पर्याप्त हेतुक है या नहीं प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। पैरवी करने में विलम्ब के लिये अपीलार्थी द्वारा दिये गये स्पष्टीकरण को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिये कोई भी स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला नहीं हो सकता है। प्रस्तुत स्पष्टीकरण को स्वीकार करना एक नियम होना चाहिए और अस्वीकृति एक अपवाद होनी चाहिए, जब चूक करने वाले पक्ष पर कोई लापरवाही या निष्क्रियता या सद्भावना की कमी का आरोप नहीं लगाया जा सकता।
>
> 60. यह सच है कि परिसीमा विधि द्वारा एक मूल्यवान अधिकार दूसरे पक्ष को प्राप्त हो सकता है, जिसे नियमित रूप से विलम्ब को माफ करके हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। साथ ही, जब हो तो दाना उच्च हो स्पष्टीकरण को मामले में जरूरत से ज्यादा परिशुद्ध और अति—तकनीकी दृष्टिकोण से अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए, जिससे उस पक्ष को अपूर्णीय हानि और क्षति पहुंचे है जिसके विरूद्ध मुकदमा समाप्त

होता है। न्यायालयों से अपेक्षा की जाती है कि वे संबंधित पक्षों के वैध अधिकारों और हितों के बीच संतुलन बनाएं।

61. परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 में किसी आवेदन के बारे में नहीं बताया गया है। यह धारा न्यायालय को किसी आवेदन या अपील को स्वीकार करने के लिये सक्षम बनाती है यदि आवेदक या अपीलकर्ता, जैसा भी मामला हो, न्यायालय को यह संतुष्ट करता है कि निर्धारित समय के भीतर अपील/आवेदन ना कर पाने के लिये पर्याप्त कारण था। यद्यपि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के अंतर्गत औपचारिक आवेदन करना एक सामान्य प्रथा है, ताकि न्यायालय या अधिकरण परिसीमा द्वारा विहित समय के भीतर न्यायालय/अधिकरण में आवेदन करने में अपीलार्थी की असमर्थता के कारणों की पर्याप्तता का मूल्यांकन कर सके, लेकिन किसी औपचारिक आवेदन के अभाव में न्यायालय/अधिकरण द्वारा विलम्ब को क्षमा के अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए कोई वर्जन नहीं है।

62. परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के सरल पठन से यह स्पष्ट होता है कि उक्त धारा के अंतर्गत राहत प्रदान करने से पहले लिखित रूप से आवेदन करना अनिवार्य नहीं है। यदि ऐसा आवेदन अनिवार्य होता तो परिसीमा अधिनियम की धारा 5 में स्पष्ट रूप से ऐसा प्रावधान होता। धारा 5 तब इस प्रकार पढ़ी जाती कि न्यायालय आवेदन या अपील दायर करने के लिये निर्धारित समय के बाद विलम्ब क्षमा कर सकता है, यदि अपीलकर्ता या आवेदक के आवेदन पर विचार करने पर, जैसा भी मामला हो, विलम्ब माफ करने के लिये न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी आवेदक के पास ऐसी अवधि के भीतर अपील न करने या आवेदन न करने के लिये पर्याप्त कारण थे। वैकल्पिक रूप से, धारा 5 में अपीलकर्ता या आवेदक, जैसा भी मामला हो, विलम्ब की माफी के लिये आवेदन करने की आवश्यकता होने का एक परंतुक या एक स्पष्टीकरण जोड़ा जाता। यद्यपि न्यायालय हमेशा इस बात पर जोर दे सकती है कि कोई आवेदन या शपथपत्र दाखिल किया जाए जिसमें विलम्ब का कारण बताया गया हो। कोई भी आवेदक या अपीलकर्ता बिना आवेदन किए, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत एक अधिकार के रूप मं विलम्ब की माफी का दावा नहीं कर सकता है।

14. ए.आई.आर. 1995 एस.सी. 425 में रिपोर्ट किए गए संग्राम सिंह बनाम निर्वाचन अधिकरण, कोटाह, भूरे के मामले में माननीय उच्च्तम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रक्रिया के नियम प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत पर आधारित हैं, जिसके लिये यह अपेक्षित है कि व्यक्तियों को अनसुना नहीं किया जाना चाहिए और निर्णय उनके पीछे नहीं दिया जाना चाहिए, उनके जीवन और सम्पत्ति को प्रभावित करने वाली कार्यवाहियां उनकी अनुपस्थिति में जारी नहीं रहनी चाहिए और उन्हें उनमें भाग लेने से रोका नहीं जाना चाहिए। अग्रेतर यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपवाद अवश्य होने चाहिए और जहां वे स्पष्ट रूप से परिभाषित किए गए है, वहां उन्हें प्रभावी बनाया जाना चाहिए, लेकिन व्यापक रूप से, उस परंतुक के अधीन रहते हुए, हमारी प्रक्रिया की विधियों का अर्थ उस सिद्धांक के प्रकाश में, जहां भी यह युक्तियुक्त रूप से संभव हो, लगाया जाना चाहिए।

15. रॉबिन थापा बनाम रोहित डोरा, (2019) 7 एससीसी 359 में रिपोर्ट किए गए मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया हैः–

''7. ''साधारणतया, कोई मुकदमा पक्षकारों की दलीलों के गुण–दोषों के आधार पर न्यायनिर्णयन पर आधारित होता है। वादी या प्रतिवादी में से किसी एक के भी व्यतिक्रम से मुकदमे को समाप्त नहीं किया जाना चाहिए। न्याय के लिए यह आवश्यक है कि जहां तक संभव हो, न्यायनिर्णयन गुण–दोष के आधार पर किया जाए।''

16. इस प्रकार, पूर्वोक्त कानूनी सिद्धांतों के आलोक में देखा जाए तो, इस अपील में आक्षेपित आदेश को कानून की नजर में बनाए नहीं रखा जा सकता है। किसी वादी को उसके वकील की गलती के कारण कष्ट नहीं उठाने दिया जा सकता। गलती करना मानवीय है और यदि वकील 08.01.2019 की जगह नोट करता है कि

अगली तिथि 08.02.2019 है, और इस गलती के कारण, उसका मुवक्किल निर्धारित तिथि पर उपस्थित होने में असमर्थ है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि उसका मुवक्किल सही तिथि की जानकारी के बावजूद, जानबूझकर उपस्थित नहीं हुआ।

17. उपरोक्त कारणों से, वर्तमान अपील स्वीकार किए जाने योग्य है और इतद्वारा स्वीकार की जाती है। विद्वान प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, ऋषिकेश, देहरादून द्वारा दिनांकित 10.01.2020 को पारित आदेश को अपास्त दिया जाता है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत अपीलार्थियों द्वारा दायर विलंब माफी आवेदन और सीपीसी के आदेश 9 के नियम 9 के अंतर्गत उनके द्वारा दायर आवेदन को भी रूपये 10,000/– हर्जाने के अध्याधीन स्वीकार किया जाता है जिसका भुगतान आज से चार सप्ताह के भीतर उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय बार एसोसिएशन एडवोकेट वेलफेयर फंड में किया जाए।

18. चूंकि वाद 2012 में दायर किया गया था और अभिवचनों का अदान–प्रदान किया जा चुका है, इसलिए, विद्वान विचारण न्यायालय से अनुरोध किया जाता है कि वह वाद को जल्द से जल्द निर्णित का प्रयास करे।

(माननीय न्यायमूर्ति श्री मनोज कुमार तिवारी जे.)